International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 12 Issue 12, December 2022,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

शोषण, दोहन और दमन के पर्याय– "ग्लोबल गाँव के देवता"

सुधांशु कुमार तिवारी, शोधार्थी

बाबा साहब भीमराव अंबेडकर केंद्रीय वश्व वद्यालय लखनऊ

ऑब्स्ट्रेक्ट– "ग्लोबल गाँव के देवता" उपन्यास रणेन्द्र का बहुआयामी उपन्यास है। इस उपन्यास के अंतर्गत जहाँ एक ओर आधुनिक–पश्चिमोन्मुखी सभ्यता और संस्कृति द्वारा आदिवासी जनजातीय सभ्यता और संस्कृति को लीलने का प्रयास दिखता है तो वहीं दूसरी तरफ आधुनिक संस्कृति के संवाहक ग्लोबल गाँव के देवता ओं द्वारा आदिवासी जनजातियों के शोषण, दोहन और दमन का प्रयास भी गोचर होता है। यह उपन्यास अपने आकार से अधिक अपनी कथावस्तु की समग्रता के लिए वरेण्य है। उपन्यास कथावस्तु और शिल्प की दृष्टि से सुखद विविधता और नवीनता से युक्त है। उपन्यास के अंतर्गत आधुनिक जीवन के समाजार्थिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि विविध पक्षों का यथार्थ और जीवंत चित्रण प्राप्त होता है। कहना न होगा कि आधुनिक उपन्यासों की आकारगत अल्पता के कारण मानव जीवन के इन पक्षों की अभिव्यक्ति में मात्रात्मक वैषम्य अवश्य उपस्थित हुआ है किंतु यह उपन्यास अपनी कथावस्तु की समग्रता के कारण पृथलाकार उपन्यासों को कथावस्तु के स्तर पर चुनौती प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास केवल आदिवासियों के शोषण, दोहन और दमन की कथा मात्र नहीं है अपितु यह आधुनिक जीवन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण आर्थिक विसंगतियों का विवरण है, यह पूंजीपतियों द्वारा कोयलबीघा अंचल की आदिवासी–जनजातियों के आर्थिक अधिकारों के अतिक्रमण का ज्वलंत दस्तावेज है। यह जनजातियों के अधिकार और पूंजीपतियों के कर्तव्य के मध्य के द्वंद्व का श्वेतपत्र है।

की वर्ड्स– ग्लोबल गाँव के देवता, आदिम–जनजाति, अंचल, शोषण, दोहन और दमन।

इतिहास साक्षी है–समाज सदैव दो वर्गों में विभाजित रहा है। एक समृद्ध और सशक्त वर्ग दूसरा गरीब तथा अपेक्षाकृत कमजोर वर्ग। शक्ति के सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए समृद्ध वर्ग सदैव कमजोर वर्ग का दोहन और शोषण करता आया है। शोषण, दोहन और दमन की यह प्रक्रिया प्रत्येक देश, काल और वातावरण में समरूप में विद्यमान

थी। समय की बदल के साथ दोहन और शोषण के स्वरूप में भी एक स्पष्ट बदलाव गोचर होता है। पूँजीपतियों द्वारा अपेक्षाकृत अत्यधिक कमजोर जनजातीय समुदायों के दोहन और शोषण की यह घटना समय के सापेक्ष इसी बदलाव का संकेत करती है। आधुनिक वैश्वीकृत–आर्थिक व्यवस्था के संदर्भ में दोहन, शोषण की इस क्रिया पर दृष्टिपात करते हुए डॉ पुष्पपाल सिंह लिखते हैं–**"भूमंडलीय आर्थिकता का सबसे अधिक श्याम पक्ष यह है कि जितना अधिक एक ही वर्ग, समाज का बहुत छोटा प्रतिशत, अमीर होता चला जाएगा, उसी अनुपात में गरीब और गरीब होता चला जाएगा।"**[1] शोषण, दोहन और दमन की यह क्रिया अमेरिका जैसी विकसित महाशक्तियों से लेकर भारत जैसी विकासशील महाशक्तियों तक में अपने विशेष संवर के साथ विद्यमान है। इसी शोषण आर दोहन का भारतीय परिप्रेक्ष्य "ग्लोबल गाँव के देवता" उपन्यास की मूल कथावस्तु है।

"ग्लोबल गाँव के देवता" उपन्यास आदिवासी जमीनों में व्याप्त खनिज संसाधनों के अनैतिक दोहन और आदिवासी जनजाति के शोषण की महागाथा है। उपन्यास की कथावस्तु के अंतर्गत खदान कंपनियों द्वारा अपनी स्वार्थ–पूर्ति हेतु जनजातीय–अंचल से खनिज पदार्थों का उत्खनन किया जाता है। बड़ी–बड़ी कंपनियाँ उत्खनित खनिज पदार्थों को तो बड़ी–बड़ी ट्रकों में अच्छे से पैक करके कारखानों में प्रसंस्करण हेतु भेज देती हैं किंतु आदिवासी–अंचल को वैसे ही गड्ढों से युक्त जमीन सौंप दी जाती है। उन्हें भरने तक के उत्तरदायित्व का निर्वहन खनन कंपनियाँ नहीं करती। स्थानीय युवकों को उनकी योग्यता के समानुपाती काम भी इन कंपनियों में नहीं दिया जाता है। उपर्युक्त विवरण कोयलबीघा अंचल में व्याप्त खनिज पदार्थों के दोहन और स्थानीय लोगों के शोषण की दोहरी विसंगति को प्रमाणित करता है। उपन्यासकार की संवेदनशील दृष्टि इस विसंगति को स्पर्श करती है और वह इस विसंगति को लक्षित करता हुआ लिखता है–**"पहले ही शर्त को दरकिनार करते हुए खुले खदानों से वेबसाइट की निकासी के बाद गड्ढे भरने की बजाये यो ही छोड़े जा रहे थे। लाभ का कुछ भी हिस्सा पाट के लोगों के विकास पर कंपनियाँ खर्च कर नहीं करती थीं। न पीने के पानी की व्यवस्था, न हॉस्पिटल, न मलेरिया–डायरिया की रोकथाम का**

कोई इंतजाम। लेबर के अलावा स्थानीय लड़कों को और किसी काबिल समझा नहीं गया, भले उनके पास बी.ए., आई. ए. की डिग्रियाँ हों।"[2]

"ग्लोबल गाँव के देवताओं" द्वारा संचालित खनन कंपनियाँ खदानों का दोहन करके जनजातियों के स्वामित्व वाले खनिज पदार्थों का उत्सर्जन करने के साथ–साथ अंचल की मूलनिवासी जनजातियों का भी घोर शोषण करते हैं। उन्हें उनके काम के अनुपात में दैनिक मजदूरी तक नहीं दी जाती। खदान का कार्य प्रारंभ करने से पूर्व लीज की जो भी शर्तें थी, उन सारी शर्तों का "ग्लोबल गाँव के देवता" निरंतर मखौल उड़ाते हैं। ग्लोबल गाँव के देवताओं की इसी संवेदनहीनता के कारण ग्रामीण अंचल के लोगों को निरंतर अनेक दुश्वारियों का सामना करना पड़ता है। आदिवासी जनजातियों की दुश्वारियों और दुश्चिंताओं का वर्णन करते हुए लेखक उपन्यास के अंतर्गत लिखता है–**"एक तरफ इन खानों ने मज्री दी तो दूसरी तरफ बर्बादी के सरंजाम भी खड़े किये। पिछले पच्चीस–तीस सालों में खान–मालिकों ने जो बड़े–बड़े गड्ढे छोड़े हैं, बरसात में इन गड्ढों में पानी भर जाता है और मच्छर पलते हैं। सेरेब्रल मलेरिया यहाँ के लिए महामारी है, महामारी। मुडीकटवा से साल दो साल पर भेंट होती है, किंतु इस जानमारू से तो हर रोज भेंट होगी।"[3]**

ग्लोबल गाँव के देवताओं की असावधानी और संवेदनहीनता के कारण इलाके का पूरा इंफ्रास्ट्रक्चर दुष्प्रभावित होता है। बॉक्साइट के खनन के परिणामस्वरूप जहाँ एक ओर जमीन में गड्ढे खुले छोड़ दिए जाते हैं तो वहीं दूसरी तरफ अपने फायदे के लिए यह खदान मालिक ट्रकों में ओवरलोडिंग करते हैं, जिसके कारण इस अंचल की सड़क–व्यवस्था बुरी तरह से तहस–नहस होती है। इन खराब हुई सड़कों का सर्वाधिक दुष्परिणाम अंचल के लोगों को ही झेलना पड़ता है क्योंकि "ग्लोबल गाँव के देवता" आकाशचारी होते हैं किंतु अंचल के सामान्य जन को सड़क के अतिरिक्त कोई अन्य विकल्प प्राप्त नहीं है। ट्रकों की ओवरलोडिंग से खराब हुई सड़क के पुनर्निर्माण को लेकर खदान मालिकों की सोच और उसके प्रभाव का वर्णन उपन्यास के अंतर्गत निम्न शब्दों म प्राप्त होता है–**"बॉक्साइट ट्रकों की ओवरलोडिंग ने सड़क की हालत खस्ता कर रखी है। सरकार को लगता है कि कंपनियां सड़क–मरम्मत करने में मदद करें। कंपनियों को लगता है कि सड़क तो सरकार की है। हम टैक्स तो**

भरते ही हैं, फिर सड़क मरम्मत क्यों करें? बरसात में गड्ढां को लेटराइट से भरकर अपनी ड्यूटी पूरी समझ लेते हैं।"[4]

उपन्यास के अंतर्गत वर्णित कोयलबीघा–अंचल की आदिम जातियों को एक ओर पूँजीपतियों के शोषण का सामना करना पड़ता है तो वहीं दूसरी तरफ उनके मध्य नवनिर्मित वैचारिक–पूँजीपतियों की मानसिक वितृष्णा का शिकार भी होना पड़ता है। ये नव–निर्मित पूँजीपति वर्ग आदिम–जातियों की प्रत्येक सुख सुविधाओं को लीलने के लिए आतुर गोचर होते हैं। उपन्यास के अंतर्गत विशेष रुप से आदिम–जातियों के लिए खोले गए भौरापाट स्कूल को सन्दर्भित करते हुए उपन्यासकार इस नवीन दुष्प्रवृत्ति की ओर संकेत करता हुआ लिखता है–**"भौरापाट स्कूल आदिम जाति परिवार की बच्चियों के लिए खोला गया था। किंतु उसमें पढ़ने वाली असुर–बिरिजिया बच्चियों की संख्या दस प्रतिशत से ज्यादा नहीं थी। ज्यादातर बच्चियाँ हेडमिस्ट्रेस और टीचर्स के गाँव की और उनकी ही जाति उराँव–खड़िया, खेरवार परिवार की थीं।"[5]**

गरीबी, भुखमरी, शोषण और दोहन की समस्या के साथ–साथ निम्न साक्षरता दर भी जनजातीय समुदायों की एक महत्वपूर्ण समस्या है। जनजातीय–अंचल के लोग कम पढ़े लिखे तथा नगरीय लोकाचारों से कोसों दूर होते हैं। "ग्लोबल गाँव के देवता" आदिवासियों की इसी कमजोरी का भरपूर फायदा उठाते हैं। भूख मिटाने की शर्त पर भोले–भाले आदिवासियों से सादे कागज पर अँगूठा लगवा लेना उनके लिए सामान्य बात है। भूख, बेरोजगारी और गरीबी से त्रस्त इन समुदायों की बहू–बेटियों का मेठो और मुंशियों डेरे पर रहना और प्रतिक्षण प्रताड़ना और शोषण का शिकार होना तत्पश्चात इसी व्यवस्था की साथ तादात्म्य स्थापित कर लेना यहाँ की सामान्य–प्रथा है। शोषण की इस असहज स्थिति की ओर इंगित करता उपन्यास का कथन दृष्टव्य है–**"हर बीफे (गुरुवार) अखाड़ा की बैठक में दो ही सवाल सामने होते कि फलाँ–फलाँ ने खदान–दलाल के सादे कागज पर ठेपा लगा दिया या फलाँ–फलाँ घर की बेटी बाहर निकल गई है या पाठ पर तो है, किंतु मेठ–मुंशी के डेरा में ही रहती है, घर नहीं आती। गरीबी, पेट और बीमारी की मार किसी भी उपाय को सफल नहीं होने देती।"[6]**

आदिवासी–अंचल की अर्थव्यवस्था का मुख्य स्त्रोत उनके खेत और उनकी जमीनें थी किंतु कालांतर में पूँजीपतियों की धन–पिपासा के शिकार ये पारम्परिक कृषक–कारीगर भूमिहीन–मजदूर मात्र बनकर रह गए हैं। उपन्यास के अंतर्गत घासी टोला का वर्णन करते समय वहाँ के निवासियों की ऐतिहासिकता की पड़ताल के क्रम में उपन्यासकार उनके दोहन–शोषण की कथा को भी निम्न शब्दों में अभिव्यक्त करता है–**"ये लोग कारीगर से भूमिहीन मजदूर बनकर रह गये। गरीबी ने हर तरह से दीन हीन बना दिया। बबुआनी के नए उम्र के लौंडों–लपाडों से लेकर अधेड़ विधुरों तक के लिए इनके घर की बहू– बेटियों की देह मर्दानगी आजमाइश का अखाड़ा हो गई थी।"**[7]

आदिवासी जनजाति की महिलाओं का खदान–मालिकों तथा मेठों, मुंशियों द्वारा शारीरिक–शोषण तो किया ही जाता है किंतु सर्वाधिक कटु–सत्य यह है कि उनके साथ बनाये गये बलात–संबंधों का हवाला देकर उन्हें ब्लैकमेल भी किया जाता है। उपन्यास के अंतर्गत जब अंचल के कुछ युवा खदान–कंपनियों के शोषण के विरोध में अपनी आवाज उठाते हैं तो उनकी आवाज को दबाने के लिए उनके सगे संबंधियों की शारीरिक–अस्मिता को तार–तार कर देने की धमकी उनको दी जाती है। उपन्यास के अंतर्गत ब्लैकमेलिंग की शिकार सलोनी ब्लैकमेलिंग की इस अमानवीय क्रिया का सबसे सशक्त उदाहरण है। उपन्यास के अंतर्गत वर्णित है–**"सलोनी में कितनी भी अपनी नौकरी की दुहाई दी, वह मानने को तैयार नहीं था। तब रामरति ने झोले से निकाल एक पुराना वीडियो कैसेट जेम्स को थमाया, जिसके बारे में सुनकर सलोनी और जेम्स दोनों को काठ मार गया। यह सलोनी के पांडे बाबा के छत्रछाया वाले दिनों का कैसेट था, तंत्र साधना वाला। रामरति ने यह भी खबर दी कि इसका कई ठो सीडी बनाकर रखे हुए हैं पांडे बाबा।"**[8] कोयलबीघा अंचल के आदिम–निवासियों के इस बहुआयामी शोषण, दोहन और दमन को रेखांकित करते हुए डॉ. पुष्पपाल सिंह लिखते हैं–**"गरीबी, लगभग भुखमरी में जीते ये लोग पूरी तरह शोषण की चक्की में पिसते हुए यहाँ के उच्च वर्ग के लिए महज एक आहार हैं, उनकी बहू बेटियाँ उनके जंगलों में रखैलों की तरह काम करने**

वाली बाइयों के रूप में जाती हैं तथा ये ही विधायकों, सांसदों, अफसरों, ठेकेदारों के लिए रात के एकांत में परोसी जाती हैं।"[9]

"ग्लोबल गाँव के देवता" आधुनिक मस्तिष्क और वैचारिकी से युक्त महाधूर्त प्राणी है। यह जहाँ एक ओर अपनी स्वार्थ–सिद्धि हेतु निरीह ग्रामीणों के शोषण, दोहन और विनाश तक में संकोच नहीं करता तो वहीं दूसरी तरफ अपनी स्वार्थ–सिद्धि के ही वशीभूत होकर ये अनावश्यक लड़ाई झगड़ों में भी नहीं उलझना चाहता। खदानों के बंद काम को शुरू करने के लिए इन्हें स्थानीय मजदूर भी चाहिए और उनकी मूलभूत सुख–सुविधाओं के प्रति उदासीनता भी इनमें रची बसी है। इस महान विसंगति का चित्रण उपन्यासकार निम्नलिखित शब्दों में करता है–**"पाट में खदानों की बंदी, लेबरों की कमी से टूट नहीं पा रही थी। श्वेदांग कंपनीश का घेराबंदी का काम शुरू नहीं हो रहा था। देवता लोग बेचौन थे। बाहरी लेबर लाकर पाट में रखना और काम लेना चौगुना खर्चे का खेल था। इसके लिए वे तैयार न थे। जब तक पाट में बॉक्साइट था, उन्हें गाँव में आबादी चाहिए थी ताकि सस्ते लेबर मिल सके। लेकिन लड़ाई–फड़ाई नहीं चाहिए थी।"[10]**

जनजाति–अंचल के लोगों के बुरे वक्त का एकमात्र सहारा उनका पशुधन ही होता है। उपन्यास के अंतर्गत निजी स्वार्थों के लिए बाबा शिवनाथ षड्यंत्र तथा मायाजाल फैलाकर गरीब और शोषित कोयलबीघा अंचल के लोगों से उनका यह धन भी छीन लेते हैं। उपन्यास के अंतर्गत बाबा शिवनाथ काले पशुओं को अशुभ बताते हुए उन्हें अपने से दूर रखने का परामर्श ग्रामीणों को देते हैं। धूर्तता और विश्वासघात से कोसों दूर सहजमना ग्रामीण उनकी बात मानने को स्वभावतः मजबूर हो जाते हैं और अपने काले पशुओं को बेचना प्रारंभ कर देते हैं। परिणामस्वरूप शिवनाथ बाबा के करीबी पशु–व्यपारी पशुओं को न्यूनतम दामों पर खरीद कर अपने लिए मुनाफे का बंदोबस्त करते हैं। उपन्यास के अंतर्गत शोषण की इस क्रिया का विदारक–वर्णन निम्नवत है–**"हाटां में काले पशुओं की इतनी आमद बढ़ी कि इनकी कीमतें अचानक गिर गयी। व्यापारियों को सारी बातों की खबर थी। वह मिट्टी के भाव में इन पशुओं को खरीदते हुए ऐसे नखरे दिखाते मानो वे आदिवासी किसानों पर उपकार कर रहे हों।"[11]**

आदिवासियों का यह शोषण महिलाओं, नवयुवतियों, युवाओं और बुजुर्गों तक ही सीमित नहीं है अपितु इस शोषण के चक्र में छोटी– छोटी बच्चियाँ भी फँस जाती हैं। शिवनाथ बाबा के स्कूल में छोटी बच्चियों के दैहिक–शोषण की अनेक घटनाएँ उस अंचल के लोगों के लिए आम घटनायें ही थो। बाबा द्वारा बच्चियों के इस दैहिक शोषण के खेल में उनके कई अनुयायी और शिष्यः–शिष्याएँ मोहरे की तरह कार्यरत थी। उपन्यास की कथावस्तु के अंतर्गत इस अनैतिक और घृणित कृत्य का वर्णन दृष्टव्य है–**"डॉक साब नें सुनते ही मामला समझ लिया भुनभुनाने लगे कि डायन भो सात घर छोड़कर खाती है लेकिन ई बबवा साला राक्षस है राक्षस। जरूर बच्ची लोग को रात में पैर दबाने के लिए बुलाया होगा। उसके बाद ही छोटी बच्चियाँ पथरा जाती हैं। दर्जनों ऐसे केस उस आश्रम में मैं देख चुका हूँ। लाज, शरम, भय सब घोलकर भी गया है हरामी।"**[12]

बॉक्साइट की अवैध खदानों, खदानों में कार्यरत मुंशी–मेठों के अतिरिक्त बड़ी–बड़ी कंपनियों के भी दोहन और शोषण का शिकार कोयलबीघा के लोग हैं। इस दोहन और शोषण की क्रिया में राजनैतिक भागीदारी उपन्यास के अंतर्गत स्पष्ट रूप में उभर कर सामने आती ह। धार्मिक ठेकेदार, बड़ी–बड़ी मल्टीनेशनल कंपनियाँ और बड़े–बड़े राजनेता किस प्रकार संगठित षड्यंत्र द्वारा अंचल के लोगों का शोषण करते हैं, उपन्यास में सहज दृष्टिगोचर होता है। धर्म, राजनीति और व्यापार की इस गठजोड़ की ओर संकेत उपन्यासकार निम्न शब्दों में करता है–**"शिवदास बाबा और विधायकजी का यह सोचना सही था कि वेदांग जैसी बड़ी कंपनी इस इलाके में केवल कटीले तार की बाड़–बंदी करने नहीं आई है। उसे अपनी फैक्ट्री के लिए कोयलबीघा अंचल में कई सौ एकड़ जमीन चाहिए। एम.पी. साहब ने दिल्ली में ही सेटिंग कर ली थी। वही छोटे काम के बहाने, इलाके को जानने–समझने–जीतने का त्रिसूत्री फार्मूला समझाकर ले आए थे। अब बाबाजी और विधायकजी के शेयर की सौदेबाजी होनी थी।"**[13]

धर्म के नाम पर सरलमना ग्रामीणांचल के लोगों को मूर्ख बनाकर उनकी आस्थाओं और संपत्तियों को हड़पने की कार्यप्रणाली के साथ–साथ धर्म के ठेकेदारों की भोग–विलास, ऐश्वर्ययुक्त–अनैतिक जीवन और धन्य–लिप्सा पर भी उपन्यास मुखर हुआ

है। उपन्यास के अंतर्गत इस भोग और धन–पिपासा का वर्णन निम्न शब्दों में प्राप्त होता है–**"अब बाबा और विधायक को सौदेबाजी का एक आर मौका मिल गया था। अब इस लड़ाई को कुचलने की प्लानिंग में साथ देने का वादा कर रहे थे बशर्ते कंपनी शेयर वाली उनकी शर्त मान ले। अंत में मुंबई के पाँच सितारा होटल के वातानुकूलित कक्ष के सुकून भरे कमरे में कई बातें तय हुईं। दोनों इतनी रकम पर तैयार हुए जितना कि न आज तक भेटाया था और न भविष्य में भेंटाने की संभावना थी।"**[14]

यह निर्विवाद सत्य है कि "ग्लोबल गाँव के देवता" उपन्यास आकार की दृष्टि से क्षीणकाय उपन्यासों की श्रेणी में आता है किंतु जीवन के विविध पक्षों को अपने में समाहित करने के कारण यह उपन्यास पृथुलाकार उपन्यासों को भी कथावस्तु की समग्रता के स्तर पर चुनौती देता है। उपन्यास के बारे में अपना मत व्यक्त करते हुए डॉ. पुष्पपाल सिंह लिखते हैं–**"यह उपन्यास बॉक्साइट क्षेत्र के लोक–जीवन, वहाँ पसर रहे भूमंडलीकरण के डैनों के नीचे पनपती वैश्विक आर्थिकता–ग्लोबल इकॉनमी– का वह भयावह और त्रासद रूप प्रस्तुत करता है जिसने वहाँ के जनजातीय समाजों की असुर संस्कृति को पूरी तरह लील लिया है।"**[15]

इतिहास पर दृष्टि डालें तो शोषण और दोहन यह क्रिया अनवरत विकासमान है। मानव सभ्यता के आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक प्रत्येक सामाजिक व्यवस्था में यह प्रक्रिया अपने विशिष्ट रूप के साथ स्वयं को प्रस्तुत करती है। आधुनिक युग तक आते–आते "ग्लोबल गाँव के देवताओं" की सहभागिता और चातुरी के कारण यह क्रिया और अधिक पीड़ादायक बनकर उभरी है। आधुनिक वैश्विक व्यवस्था को देखें तो मानव अधिकारों का ढिंढोरा पीटने वाला अमेरिका, इराक के प्राकृतिक संसाधनों के साथ इसी दोहन और शोषण के कृत्य को निरंतर संपादित कर रहा है। पाकिस्तान पाक–अधिकृत कश्मीर क्षेत्र में, चीन अवैध रूप से अधिकृत तिब्बत क्षेत्र में, तो रूस यूक्रेन के क्रीमिया, डोनबास आदि इलाकों में दोहन और शोषण की इसी पद्धति का ही अनुसरण कर रहे हैं। रूस–यूक्रेन युद्ध इस शोषण और दोहन का सबसे घृणित और नया उदाहरण है। चाहे यूरोप महाद्वीप हो, चाह अमेरिका, चाहे एशिया महाद्वीप हो चाहे अफ्रीका, प्रत्येक महाद्वीप शोषण और दोहन की इस क्रिया का भोगी और भागी है। "ग्लोबल गाँव के

देवताओं" के इस शोषण और दोहन को रोकने के लिए प्रत्येक राष्ट्र के एकाकी प्रयासों के अतिरिक्त संपूर्ण विश्व को समेकित होकर कुछ कठिन और महत्वपूर्ण निर्णय लेने होंगे। सतत–विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता देनी होगी। शोषितों के अधिकार को मान्यता देते हुए "ग्लोबल गाँव के देवताओं" के कर्तव्यों को भी निर्धारित करना होगा ।

सन्दर्भ सूची–

1. भूमंडलीकरण और हिंदी उपन्यास– पुष्पपाल सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण– 2012, पृष्ठ–145
2. ग्लोबल गाँव के देवता– रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण–2019, पृष्ठ–51
3. वहीं, पृष्ठ–13
4. वहीं, पृष्ठ–16
5. ग्लोबल गाँव के देवता– रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण–2019, पृष्ठ–20
6. वहीं, पृष्ठ–48
7. वहीं, पृष्ठ–49
8. वहीं, पृष्ठ–55
9. 21वीं शती का हिंदी उपन्यास– पुष्पपाल सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2015, पृष्ठ–366
10. ग्लोबल गाँव के देवता– रणेन्द्र, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, संस्करण–2019, पृष्ठ–94
11. वहीं, पृष्ठ–58
12. वहीं, पृष्ठ–69
13. वहीं, पृष्ठ–89
14. वहीं, पृष्ठ–89
15. 21वीं शती का हिंदी उपन्यास– पुष्पपाल सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2015, पृष्ठ–371